''भोजपुरी उपन्यास 'के हवन लछुमन मास्टर' में सामाजिक समस्याओं का दिग्दर्शन''

डा0 वन्दना श्रीवास्तव

हिन्दी विभाग, प्रोफेसर

जे0एन0पी0जी0कॉलेज,लखनऊ

उर्मिला मौर्या

असिस्टेंट प्रोफेसर

कमला आर्य कन्या पीजी कॉलेज, मिर्जापुर

शोधसार–

प्रसिद्ध कथाकार कृष्णकुमार जी भोजपुरी साहित्य के वह दैदिप्यमान नक्षत्र हैं, जिन्होंने आधुनिक भोजपुरी कथासाहित्य को एक नई गति और दिशा प्रदान किया है। कृष्ण कुमार जी ने भोजपुरी भाषा में लंबी कविता, कहानी, उपन्यास आदि रचकर पाठकों के सम्मुख जो ख्याति प्राप्त की है, वह अतुलनीय है। उनकी प्रत्येक कहानी में वर्तमान परिवेश में व्याप्त विसंगतियों, विकृतियों, विद्रूपताओं और दुर्व्यवस्थाओं पर तीखा प्रहार किया गया है। इनके द्वारा लिखित 'के हवन लछुमन मास्टर' एक ऐसा ही उपन्यास है, जिसमें लेखक द्वारा समाज में फैली जाति व्यवस्था, स्त्रियों की अशिक्षा, बेटा–बेटी के बीच होने वाले भेदभाव, अंधविश्वास के नाम पर महिलाओं का शारीरिक शोषण, नशाखोरी तथा बेरोजगारी जैसी ज्वलंत समस्याओं को बहुत ही सशक्त ढंग से उजागर किया गया है। उपन्यास की कथावस्तु कथानायक 'लछुमन मास्टर' के इर्द–गिर्द ही घूमती है।

बीज शब्द– अंधविश्वास, शोषण, सशक्तिकरण, शिक्षक, प्रगतिशील आादि

भारतीय संस्कृति में शिक्षक का स्थान ईश्वर से भी ऊँचा माना गया है। एक प्रगतिशील, स्वस्थ समाज और राष्ट्र के निर्माण में शिक्षक की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। एक

आदर्श शिक्षक अपने जीवन के अंत तक मार्गदर्शक की भूमिका का निर्वहन करता है, तथा समाज का पथप्रदर्शन करता है। कथानायक लछुमन मास्टर भी अपने अमूल्य प्रयासों के द्वारा समाज में फैले लैंगिक भेदभाव, अंधविश्वास, नारी शोषण, नशाखोरी जैसी सामाजिक कुरीतियों पर कुठाराघात कर समाज को एक नई दिशा देने का कार्य करते हैं। सम्पूर्ण उपन्यास पाँच अध्यायों में विभक्त है। जिसमें लेखक ने प्रथम अध्याय की शुरुआत समाज में व्याप्त जाति व्यवस्था पर करारे प्रहार के साथ किया है। जाति व्यवस्था हमारे सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त एक गंभीर बुराई है, जो दिन–प्रतिदिन समाज की जड़ों को खोखला बना रही है। कहने को तो हम 21वीं सदी में रहते हैं, प्रगतिशील कहलाते हैं, परंतु आज भी हमारा समाज जातिव्यवस्था के मकड़जाल में इस कदर जकड़ा हुआ है कि आज भी किसी व्यक्ति की पहचान और प्रतिष्ठा उसके गुणों के द्वारा नहीं, अपितु जाति के द्वारा निर्धारित होती है। लछुमन मास्टर जब 'रघुवा' के विद्यालय में योगदान करने के लिए गाँव पहुँचते हैं तो गाँव का एक तथाकथित संभ्रान्त व्यक्ति उनसे पूछता है– **"अपने के कवन असरे हईं.. ...?"**[1] उस ग्रामीण के इस सवाल पर लछुमन मास्टर कुछ समय के लिए चुप्पी साधे रहते हैं और फिर बड़े ही प्यार से मुस्कुरा कर जवाब देते हैं– **"राम आसरे.....।"**[2] उनके इस जवाब पर वह संभ्रान्त व्यक्ति मुस्कुराकर पुनः पूछता है– **"बताई.....! बताई.....! कवनो बात नइखे। लजाईं मत। आपन जाति बतावे में का हरज बा ?"**[3] इस पर मास्टर साहब अपनी चतुराईपूर्ण जवाब से उस तथाकथित संभ्रांत व्यक्ति को पराजित करते हुए कहते हैं– **"हरज तो कुछुओ नइखे, बाकिर आपन जाति हम त जानते नइखीं। बस अतने जानऽतानी कि आदमी हईं आ आदमी के कवनो जाति ना होखे। सभकर हाड़, चाम, खून सभ एके लेखा होला। तब जाति–पाति के का सवाल उठऽता.....?"**[4]

समाज में लड़कों की अपेक्षा लड़कियों को पढ़ाना आवश्यक नहीं समझा जाता है। आज भी हमारा सामाज लड़कियों को दोयम दर्जे का ही समझता है, तथा उन्हें घर की चहारदीवारी में ही बाँधकर रखना चाहता है। प्रगतिशील कहलाने वाला यह आधुनिक समाज आज भी बेटियों को बोझ ही समझता है। समाज की यह धारणा है कि अगर लड़की पढ़–लिख जाएगी तो उसके लिए पढ़ा–लिखा वर भी खोजना पड़ेगा। उसके लिए अत्यधिक दान, दहेज, तिलक देना पड़ेगा। तभी तो जब लछुमन मास्टर रघुवा गाँव में लड़कियों को पढ़ाने के लिए गाँव वालों को प्रेरित करते हैं, तो संपूर्ण गाँव उनके ही खिलाफ हो जाता है। **"लइकिन के पढ़ावल बहुत जरूरी नइखे मास्टर साहेब। ओहनिन खातिर पढ़ाई–लिखाई से ढ़ेर जरूरी घर के कामकाज बा। ओहनी के नोकरी नइखे करे के, बस खाली घर गृहस्थी सम्हारे के बा। ऊ जहवां जइहे स ओइजा ओहनी के इहे सभ करे के बा। लइकिन के पढ़ा देला के बाद ओहनिन के बाग न थम्हाई। कानून बतियावे लगिहें स। ओहनिन खातिर पढ़ल–लिखल दुलहा खोजे के परी। बढ़–चढ़ के तिलक, दहेज देबे के परी। खेत बधार सभ बेंचा जाई.....।"**[5]

लड़कियों के प्रति गाँव वालों के ऐसे निम्न दृष्टिकोण को देखकर मास्टर साहब का हृदय द्रवित हो उठता है और उनके हृदय की पीड़ा गाँव वालों के बीच फूट पड़ती है–

''लइकी काहे नोकरी ना करिहन स ? ऊ लड़िकन से कवना मामिला में कम बाड़ी स ? शहर में त लइकियों नोकरी करेली स। बढ़िया–बढ़िया खेल प्रतियोगिता, संगीत प्रतियोगिता में भाग ले ली स आ आपन करामात देखा के लोगन के दांते अंगुरी दबवा देली स। इंजीनियरिंग, डॉक्टरी से ले ले कंप्यूटर तक सभ पढ़ाई करेली स। ओहनिन के कवनो क्षेत्र में लइकन से ओनइस नइखी स..... बीस बाड़ी स! बोर्ड–युनिवर्सिटी के परीक्षा में लइका लोग से एकदम अव्वल नंबर से पास करत बाड़ी स। ओहनिन के लइकन से कम आँकल ओहनिन के साथे घोर अन्याय बा।''[6]

गाँव वालों के भारी विरोध के बावजूद मास्टर साहब अपने उद्देश्य से जरा भी नहीं डिगते हैं। जिस प्रकार लोहा लोहे को काटता है उसी प्रकार अपने लक्ष्य की पूर्ति हेतु मास्टर साहब लड़कियों को ही लड़कियों के विरुद्ध अपना हथियार बनाते हैं, और विद्यालय आने वाली तीन लड़कियों शांति, प्रभा और उषा के माध्यम से गाँव की अन्य लड़कियों को पढ़ने के लिए जागरूक तथा प्रेरित करते हैं। फिर तो रघुवा गाँव की संपूर्ण बयार ही बदल जाती है। जब इन लड़कियों से प्रेरित होकर गाँव की हर लड़की कहने लगी कि– **''शांति, प्रभा, उषा सभे स्कूल जाता, हमहूँ स्कूल जाइब बाबू जी। हमहूँ पढ़बि।''[7]** तो वे लोग भी उनकी जिद के आगे नतमस्तक हो जाते हैं जो लोग अपनी लड़कियों को स्कूल भेजने के विरुद्ध थें।

उपन्यासकार की इस सोंच पर ही प्रसिद्ध भोजपुरी साहित्यकार अरुण मोहन 'भारवि' लिखते हैं– **''चाँद पर जाये वाली एइ दुनिया के चाँदन के हमनी के गाँवन में जीवन केतना उपेक्षित, शोषित आ पीड़ित बा एकर परतोख देत उपन्यासकार 'बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ' के नारा के अमली जामा पहिरावे में, आधी आबादी के आजादी दिलावे में, ओकरा बुलंदी के परचम लहरावे में नया इतिहास रच देले बाड़न।''[8]**

दूसरे अध्याय में लेखक ने नारी सशक्तिकरण पर जोर दिया है। हमारे पुरुष प्रधान समाज में स्त्रियों के संदर्भ में बड़ा ही विरोधाभासी दृष्टिकोण दृष्टिगत होता है। एक दृष्टिकोण समाज में स्त्री को पुरुषों के समकक्ष एवं प्रस्थिति दिलाने के पक्ष में है, तो दूसरा दृष्टिकोण उन्हें पुरुषों से निम्न दर्जे का मानता है। प्रथम दृष्टिकोण नारी को शक्ति, ज्ञान एवं संपन्नता का प्रतीक मानता है। उसे दुर्गा, लक्ष्मी तथा सरस्वती के रूप में पूज्य मानता है। उसके अनुसार स्त्री पुरुष की अर्धांगिनी है। वह यह भी मानता है कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' , यदि वास्तव में समाज में नारी को यही स्थान प्राप्त है तो नारी के प्रति किसी भी प्रकार का अपराध, अत्याचार तथा हिंसा नहीं होनी चाहिए। वहीं नारी के प्रति दूसरा दृष्टिकोण, नारी को समाज में पुरुषों के समान अधिकार दिलाने का विरोधी है। वह चाहता है कि स्त्री हमेशा पुरुषों की दासी बनी रहे। सामाजिक बंधनों और रूढ़ियों के दायरे में ही रहकर पुरुषों की सेवा करें, उसकी आज्ञा माने, उसका साथ दे। इसी कारण समाज में नारी को उपेक्षित, प्रताड़ित होना पड़ता है। उसका शोषण एवं दमन किया जाता

है, उसे जलाया जाता है, उसके साथ बलात्कार किया जाता है, कभी–कभी तो उसकी हत्या तक कर दी जाती है।

सरकारें चाहे महिला–सशक्तिकरण के तमाम ऊँचे–ऊँचे दावे करें, परंतु सिजतन जैसे अत्याचारी पतियों द्वारा घरों में शारीरिक प्रताड़ना की शिकार होती लखपतिया जैसी महिलाएँ उनके इस दावे को खोखला ही साबित करती हैं। पुरुष वर्ग आज भी महिलाओं को अपने पाँव की जूती ही समझता है। उसको मारने–पीटने में अपना शान और पौरुष समझता है। लखपतिया जब रात के दस बजे चीखती–चिल्लाती है– **''बाप रे बाप.....। मुअनी रे दादा.....। अब ना रे माई.....। जान गइल रे दादा.....। सउँसे देहिया दाग देले बाड़े.....। दउरऽ लोग ए भइया.....। जान बचावऽ लोग.....। अब ना जीअब ए माई.....।''**[9]

जवाब में सीजन की कर्कश आवाज और तेज हो जाती है– **''जतना कुबत होखे ओतना चिचिओ साली। हमहुँ आज देख ले तानी कवन तोर दमाद तोरा के बचावे आवत बाड़े। बिना सोझि अवले आजु तोरा के छोड़बि ना। बहुत बरदास कइनी। आजु के बाद ते अब मुँह ना लड़इबे।''**[10] यह सब सुनकर मास्टर साहब को बर्दाश्त नहीं होता है और वह बिस्तर से उठकर विद्यालय के बरामदे में आ जाते हैं। तभी लखपतिया की हृदयविदारक चीख और तेज हो जाती है– **''छोड़ीं झोंटवा.....! आहि ! आहि ! आहि रे माई ! चुप हो जात बानी। पेटवा प से लतवा हटाई। आहि रे माई ! एह से नीमन रहल हा कि जनमते नीमक चटा देले रहिते। का करी ए दादा ! आवऽ लोग हो भइया ! आहि.....! आहि.....! आहि रे बाबू ! मुअनी रे दादा !''**[11]

अबकी बार लखपतिया की चीख को सुनकर मास्टर साहब से रहा नहीं जाता है। वह बेचैन हो उठते हैं, अपने आप को रोक नहीं पाते हैं। गाँव वालों के लाख मना करने के बावजूद वह सिजतन को समझाने और बीच–बचाव के लिए उसके घर पहुँच जाते हैं। बीच–बचाव के बाद जब वह बिस्तर पर आते हैं तो उन्हें नींद नहीं आती है। सिजतन के घर की स्थिति उनके दिल को झकझोर देती है। **''बतावऽ, हई कतना नीच आदमी बा सिजतन ? बेकसूर एगो अबला के हतना सांसत देता। ई कइसन मरद बा कि लखपतिया लेखा सुन्नर कुलांच भरे वाली हिरनी के गोड़ में पैकड़ पहिरा देले बा। मेहरारू के रूप में जनम लेल ही बड़का गुनाह बा। सहल, घुटल आ तिल–तिल क के मरल ही ओकर नियति हो गइल बा। घुसकुरिया काटत जीवन आ सिसकत मन के अपना भाग्य प थोपि के जियत रहे खातिर ऊ विवश बिया। सिजतन से मिले वाला एह दर्दनाक प्यार के एगो सामान्य गतिविधि मान के संतोष क ले ले बिया। परिवार के बाहर के कवनो आदमी से एह दुख के चरचा कइल मुनासिब नइखे समझनत। धन्य मेहरारू बिया। अइसन मेहरारू त हम आजु तक देखलहीं ना रहली हाँ। महिला सशक्तिकरण आ नारीवादी आंदोलन के प्रचार–प्रसार के तमाम कोशिश एह घर खातिर एकदम झूठ बा..... सफेद झूठ.....।''**[12]

दूसरे दिन खल स्वभाव वाला सिजतन अपने साथियों के साथ लछुमन मास्टर की हत्या करना चाहता है परन्तु भगवान बुद्ध जैसे अपने शांत, सौम्य वचनों से डाकू

अंगुलिमाल को सही रास्ते पर लाते हैं, ठीक वैसे ही लछुमन मास्टर अपने शान्त, सौम्य विचारों को उन अपराधियों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं– **"असल बात ई भइल कि हम सूते के तइयारी में बिछवना प मच्छड़दानी में जस ही घुसनी सिजतन भई किहाँ से शोर गुल सुनाये लागल। दूनों मरद–मेहरारू के चिचियाहट के बीचे कबो–कबो इहाँ के माइयों के बोली हमारा कान में समाये लागल। हम सिजतन भाई जी के घरे जइबो न करिती, बाकिर स्कूल से बहरसी भइला प देखनी कि टोल परोस अपना दुआर–जंगला के केवारी खोल के ईहाँ के घर से आवेवाला आवाज के लुत्फ उठावऽता, मजा लेता, हँसता, फुसफुसाता आ मने–मने मुसकाता, बाकिर केहू इहाँ के घरे जाये के उतजोग नइखे करत। एह बीच इहाँ के घरनी के आहत आवाज अवरू तेज हो गइल। ऊ आवाज सुन हमार मन ना मानल, हिरदेया में हाह उठे लागल। तब हम अपना के ना रोक पवली। बाध्य हो के इहाँ के घरें चल गइनीं।"**[13]

मास्टर साहब यहीं नहीं रुकते हैं। वह आगे भी अपने विचारों को निडर होकर व्यक्त करते हुए कहते हैं– **"हमारा समझ से मेहरारू जनमे से लत्तर लेखा होली। ओकरा मरद के मजबूत सहारा के जरूरियात होला। बिना मरद के सहारा के पवले ऊ जमीन प लरक के कमजोर लत्तर बन जाली। ओह सहारा के जगहा प मेहरारू के मारल–पीटल भा प्रताड़ित कइल कतना जगून बा, ई हम ना कहबि, अपने सभे एह बात प सोंची..... विचारी.....। ऊ आपन मतारी–बाप छोड़ के रावा घरे आइल बिया। रावा माई–बाबू के बरियारी ओकरा माई–बाबू स्वीकारे के बा। का अतहत बड़ जुलूम हम रावा सहि सकत बानी ? ई हमनिन के तहजीब करे वाला यक्ष सवाल बा। ऊपर से ओकरा के मारल–पीटल कतना जाएज बा ? एकर जवाब दे के रावा सभे हमरा के जानो से मारि देबि त हमरा कवनो फिकिर–फिकिरात नइखे। समझदार खातिर इशारा काफी होला। अपने सभे होशियार आदमी बानी। अउरू हम कुछुओ ना कहबि। अपने सभे के बाल–बच्चन के शिक्षा देबे खातिर रावा सभे के गाँव में आइल बानी। हमरा गाउंज मामिला से का जरूरत बा ? इहाँ के घरनी के आहत आवाज हमरा के इहाँ घरे जाये खातिर बाध्य क देलस। एह में दोसर अउर कवनो बात नइखे। आगे रावा सभे जवन सलूक हमरा साथे करे के मन बनवले बानीं करीं। हम ओकरा के सहि लेबि। हमरा कवनों दिक्कत नइखे। हम पूरा मन बना के तइयार बानी।"**[14]

लछुमन मास्टर की बात सुनकर सिजतन और उसके तीनों साथी निरूत्तर होकर नतमस्तक हो जाते हैं। वहीं मास्टर साहब सोचते हैं कि– **"अबले इहे सुनले रहन..... अपराधियन के कवनो दीन–ईमान ना होखे, विवेक ना होखे, अच्छा–बुरा सोचे के सामर्थ्य उनका भीतर ना रहि जाला..... बाकिर ओह छन उनका ई सभ बात सोरहो आना झूठ बुझाइल । उनका एह बात के प्रतीति हो गइल कि ना..... अबहीं दुनिया में ढ़ेर बात बाँचल बा। ओकरा के बस खाली सुनगा देबं के बा।"**[15]

तीसरे अध्याय में लेखक ने इकलौती पुत्री के पिता रघु काका के माध्यम से उस पितृसत्तात्मक संपत्ति व्यवस्था पर करारा चोट किया है जो भारतीय समाज के जेहन में बेटा–बेटी के खाई के रूप में सदियों से अपना स्थान बनाए हुए है। पुत्र को हमारे समाज में परिवार का अहम हिस्सा माना जाता है और कन्या को पराई अमानत। आज भी पुत्र के जन्म पर बधाई और सोहर गाए जाते हैं जबकि पुत्री के जन्म पर पिता का सर बोझ से झुक जाता है। बेटे को तारणहार समझा जाता है। एक पिता को इस संसार से तरने के लिए पुत्र का पिता होना आवश्यक है पुत्री का नहीं। समाज का पढ़ा–लिखा शिक्षित व्यक्ति भी इस मानसिकता से मुक्त नहीं है। रघु काका का एम0 ए0 पास भतीजा उनसे कहता है– **"बेटी से कबो ना तरिहें रघु काका। आज तक ले ई दुनिया में भइले नइखे। मुअला प पानी खातिर तरसिहें। नइखे मालूम त सतदेव मिसिर से चलि के पूछ ल लोग कि रघु काका के मुअला प केकरा आग देला से उनकर तरन–तारन होई।"**[16] जवाब में गाँव की पढ़ी–लिखी सुनैना चाची से रहा नहीं जाता है। वह उमेश को फटकारते हुए कहती हैं– **"ई एकदम नाजायज बतियावत बाड़े उमेश बबुआ। ईमान भ बात बोले के चाहीं। अपना फेरा में बाड़ें। मुफुत के माल भेंटाता। ई एकदम बेकार के बात बा। बेटा–बेटी दू गो ना होला। ई सभ समझदारी के फेरा बा। मुअला प जीव कहवाँ उड़ि जाला, एकरा के के देखले बा ? ओकर गति का होला, ई केकरा मालूम बा ? जवन आँखि से लउकत बा बस ओही पर विश्वास करीं। एह में ढ़ेर तरक–वितरक करे के कवनो जरूरत नइखे। माटी के देह के गति केहू नइखे जानत। ओकर ना केहू बिगाड़ सके, ना बना सके, काया आ माया के मेला एकदम झूठ ह। बाहर से गोर आ भीतर से करिया। नियति के बाँह बहुत बड़ ह। ऊ जवन चाही तवने होई। आदमी के पराकरम से कुछ न होखे। सभ नाच उहे नचावेलें। सतदेव मिसिर कवनो भगवान ना हवें कि सभ उहे देखले बाड़े। बेटा–बेटी केहू कुछ ना करी। एह शरीर के जवन गति लिखल बा। उहें होई। आदमी के चतुराई कुछ काम ना आवेला।"**[17]

रघु काका जब अपने बीमार नाती के जीवन रक्षा हेतु अपने खेत को महाराज नामक व्यक्ति के हाथों रेहन रखकर अपनी इकलौती बेटी कुलवन्ती को पैसा दे देते हैं, तो इस बात को सुनकर मेघू और उनका पुत्र उमेश आगबबूला हो जाते हैं तथा विरोध पर उतर आते हैं। खेती रेहन रखने की प्रक्रिया में मध्यस्थता करने वाले लछुमन मास्टर को भी उनके भयंकर विरोध का सामना करना पड़ता है, परंतु उत्तम और प्रगतिशील समाज के पक्षधर लछुमन मास्टर के निर्देश पर सुनैना चाचा ग्रामीण महिलाओं को संगठित करती है– **"एगो बेटी के हक के लड़ाई बा। एह मोका प हमनिन के एक हो जाये के बा। अन्याय के खिलाफ आवाज उठावे के बा। कुलवन्ती के समर्थन में तनिको नइखे लजाये के। खुल के मरद लोगन के सोझा आ जाये के बा। समय के माँग बा कि हमनिन के अपना स्थिति आ शक्ति के पहचानी जा। सोझा आवे वाला हर चुनौती के सामना करे खातिर तइयार रहीं जा। आपन आत्मसम्मान बनावल आज बहुते जरूरी बा। हमनियों के उहे हक बा जवन मरद लोग के बडुएं। हमनियों के आपन शक्ति के परिचय गाँव के लोगन के करा देबे के**

बा। ढ़ेर गाँवन में मेहरारू अपना अगल–बगल के हवा–पानी के बदल देली स। चाहे ऊ घर के चउकठ के भीतर के चहारदिवारी के बतकही होखे चाहे सामाजिक बंधन के तूरे वाली बात। हमनियों के अब सजग हो जाये के जरूरत आ गइल बा। दोसरा के अलम प जिअला प धोखा खाये के परी। अपना गोड़ प अब अपने खाड़ होखीं जा। कंधा से कंधा मिला के चली जा आ महाराज के खेत दखल करवा के कुलवन्ती के मदद में जुट जाई जा। देरी कइला के काम नइखे। भीतरी मन बनाई जा आ एगारह मार्च के मध दुपहरिया में उतरि जाई जा मेघू के टोपरा पऽ..... ।"[18]

परिणामतः यह होता है कि कल तक जो लोग रघु काका के खिलाफ बोल रहे थें, वे भी उनके साथ हो गयें।

चौथे अध्याय में उपन्यासकार ने लछुमन मास्टर के माध्यम से तंत्र–मंत्र की आड़ में स्त्रियों पर हो रहे शारीरिक, मानसिक, आर्थिक शोषण तथा देह व्यापार के खिलाफ बिगुल फूँक दिया है। आज का समाज अपने आपको चाहे जितना आधुनिक माने, चाहे कितने ही विकास के दावे करें, चाहे कितना ही शिक्षित होने का अभिमान करे, परन्तु अंधविश्वास आज भी हमारे समाज में अपनी गहरी जड़े जमाये हुए है। यह समाज में फैला एक ऐसा रोग है, जो सदियों से समाज की जड़ को खोखला बना रहा है। आज भी भूत, प्रेत, डायन, चुड़ैल, झाड़–फूँक, टोना–टोटका, बलि–प्रथा और धर्म के नाम पर न जाने कौन–कौन–सी परंपराएँ हैं जिनको हम न तो मानवीय कह सकते हैं और न ही नैतिक। कैसी विडंबना है कि एक तरफ तो हम विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में होने वाली नूतन खोजों का भरपूर लाभ उठा रहे हैं तो वहीं दूसरी तरफ कुरीतियों, मिथकों, अंधविश्वासों एवं पाखंडों के चंगुल से अपने जीवन और समाज को बाहर निकालने में असमर्थ बने हुयें हैं। इन सामाजिक कुरीतियों की सबसे आसान शिकार होती है गाँव की भोली–भाली, सीधी–सादी महिलाएँ।

मास्टर साहब जब रघुवा ब्रह्म मेला में सभ्य समाज के कलंक कहे जाने वाले पाखंडी ओझा, सोखा तथा तांत्रिकों के मकड़जाल में फँसी गाँव की सीधी–सादी महिलाओं को देखते हैं तो उनका हृदय व्यथित हो उठता है– **"एह हाईटेक जुग में दुनिया जहवां हतना तरक्की क गइल, ओइजे रघुवा समेत आस–पास के गाँवन में रहे वाला लोग अतना पिछुआइल कइसे रहि गइल ? आज आदमी ग्रह, उपग्रह के जतरा क के लवटि आइल। विज्ञान के सहारा से जीवन के तमाम सुविधा मुहइया करावल जा रहल बा। तवनो प अबहीं गाँव के मरद मेहरारू कइसे एह सभ सामाजिक रूढ़ि में अझुराइल रहि गइलें। एह सामाजिक कोढ़ के दवाई का हो सकता ? कइसे गाँवन से ई रोग हटी ? एक से एक संत महात्मा एह देश में पैदा भईलें..... उपदेश देलें..... बाकिर लोगन के भीतर जनमल एह मानसिक पाप के काहें ना धो पवलें..... हटा पवलें.....?"**[19]

आज चिकित्सा के क्षेत्र में तमाम आधुनिक आविष्कारों और चिकित्सकों के होते हुए तथा शिक्षा और जागरूकता के तमाम दावों के बावजूद समाज में तांत्रिकों और नीम

हकीमों का पूरा वर्चस्व कायम है। ये ढ़ोंगी, पाखण्डी बच्चा प्राप्त करने की विकट इच्छा के चलते महिलाओं को अपनी कामवासना का शिकार बनाते हैं। उनके मान–सम्मान और प्रतिष्ठा को अपने अनैतिक कृत्यों से रौदते हैं, मर्दित करते हैं। रघुवा ब्रह्मस्थान पर एक ऐसी ही वितृष्णाजनक खुला त्वचा संपर्क लछुमन मास्टर की संवेदना को झकझोर देता है। वह चिंतन करते हैं– **''एह में मेहरारून के कवनो दोष नइखे। जब अस्पताल खुलल बा, डॉक्टर ओह में बइठता त रोगी जइबे नूं करी ? एह ममिला में सबसे बदमाश ओझा बाड़े स। एहनिन के बिना खटले माल मारऽतारें सऽ। कमात–कमात गिरहत के चमड़ी करिया हो जाता, बाकिर देह प एगो सुबहित गंजी नइखे नसीब होत। होतो बा त फाटले–चीटल। आ एहनिन के धोती, कुरता, गमछा, बकुला के पाँख लेखा बगबगाता। हरवाह के घामा में दिन भ हर जोतत–जोतत हाथ में ठेला पर जाता, मुँह करिया हो जाता, हड़री–हड़री लउकता। कुदारी चलावत–चलावत हांफ कवर जाता बाकिर नून–रोटी प आफत बा आ एहनिन के पोलाव–मुर्गा प दारू उड़ावतारें स। अँग्रेजन लेखा बरऽतारें स। खइला आ बइठला से तोंद निकाल लेले बाड़ें स। साथे एक से एक धराऊँ मेहरारून–लइकिन जोरे ऐश–आराम करऽतारें स।''**[20]

लछुमन मास्टर का उद्विग्न मन उसी रात इस सामाजिक कुरीति का प्रतिकार करने के लिए बेचैन हो उठता है। वे चिंतन करते हैं– **''राजाराम मोहन राय त अकेलही सती प्रथा के बंद करवा दे लें। मदन मोहन मालवीय अकेलहीं काशी हिंदू विश्वविद्यालय खड़ा क देले। गाँधी जी भारत से अंग्रेजन के तड़िया के देश आजाद करवा के राष्ट्रपिता के उपाधि पवले। का हम कुछ नइखीं कर सकत ?''**[21]

अगले दिन मास्टर साहब गाँव में जनमत तैयार कर लोगों को आत्मसम्मान, प्रतिष्ठा और बदलते समय के साथ चलने के लिए प्रेरित करते हैं। इसी क्रम में समाज के कलंक पाखंडी ओझा और सोखा द्वारा उनकों भयाक्रान्त भी किया जाता है– **''हमनी के धंधा चउपट करे के अब शुरू कइलऽ। हमनी के सिजतन अ रघु सिंह ना हइ जा कि मान जाइबि जा। कुछुओ होई, तोहरा के आजु जीयत ना छोड़बि जा। ना रही बास ना बाजी बसुरी। एही स्कूल में तोहार कब्र ना बनवा दी जा त असलजादा के जमल ना।''**[22]

पोतन पासवान के द्वारा तो मास्टर साहब को गाँव से निकालने की धमकी भी दी जाती है, परंतु मास्टर साहब अडिग रहते हैं– **''रावा जवन बुझा, तवन करीं। हम ना कुछ कहबि। बाकिर एह काम में जब गोड़ आगा बढ़ा देनी त पीछा ना हठबि। खाली रघुवा गाँव के ना हमरा सउँसे जवार–पथार से ई रोग हटा देबे के बा। रावा जतना समरथ होखे, बाजि मत आइबि। हमरा बदली के भी कवनो फेरा नइखे। रावा जेकरा लगे जाये के होखे जाई, आ जतना पैरवी रावा से हो सके, उठा मत राखबि। हम एइजा रहबि, चाहे इलाहाबाद बदली हो जाई, एह डरे हमार गोड़ नइखे काँपत। ना होई त हमार हतेआ करवा देबि। हम त अकेलहीं स्कूल प रहीला। रावा बताई कि रावा घर के बेटी–बहिन के केहू इज्जत लूटी आ रउआ बरदास क लेबि.....? रघुवा समेत गाँव–जवार के बेटी–पतोह**

के इज्जत खुलेआम लुटा रहल बा, आ रावा कहऽतानी कि हम चुप लगा जाई। ई कबो नइखे हो सकत। रावा चुपचाप अपना घरे जाई। ढ़ेर रंगदारी कइनी सभे..... अब ना चली.. ....। हमार जान चल जाई ऊ हमरा कबूल बा, बाकिर रघुवा के इज्जत हम अपना जीते जी ना लुटाये देबि।"[23]

उपन्यास के पाँचवें तथा अंतिम अध्याय में दिखाया गया है कि लछुमन मास्टर की दिनों–दिन बढ़ती साख से परेशान होकर गाँव के कुछ दबंग और शरारती तत्त्व उन पर चारित्रिक पतन का आरोप लगाकर उन्हें अपने मार्ग से भ्रष्ट करना चाहते हैं। अपने इस निकृष्ट कार्य की सिद्धि हेतु वे गाँव की एक उच्छृंखल लड़की लटगेनिया को अपना हथियार बनाते हैं। लटगेनिया जब भरी दुपहरिया में बन–ठनकर मास्टर साहब के पास अकेले स्कूल में पहुंचती है, तो अनुभवी मास्टर साहब को उसकी मंशा भाँपते देर नहीं लगती है। वे बिना लाग–लपेट के उसको फटकारते हुए कहते हैं– **"हम तोर कुछुओ ना सुनबि। ते अबहि एइजा से भागि जो। आ कहि दे तानी, सम्हरि जो। अबहीं समय बा। जीवन भ असही जवान ना रहबे। जवानी बीतते मौज–मस्ती उड़िया जाई। ई चार दिन के चीज ह। लफुअन के संगत छोड़ दे। घीव के माछी हो जइबे। एड्स के झउरा में सउना जइबे। रंगीली बुढ़ियन के हाल हो जाई। एक खिल्ली पान प महँग हो जइबे। आइन्दे अगर स्कूल प आ जइबे त तोर गोड़ काट देब। जान मार देब। हमरा मुअला–जिअला के कवनो फिकिर–फिकिरात नइखे। तोर इयार हमार एगो बार ना टेढ़ करिहें स।"[24]**

लटगेनिया गाँव की एक उच्छृंखल लड़की है। अपनी इसी उच्छृंखलता के कारण वह बार–बार गाँव के मनचलों के हवस का शिकार भी होती है, और आंतरिक रोग की गिरफ्त में भी आ जाती है, परंतु इस घटना को दबाए रखती है। इस बात की जानकारी जब मास्टर साहब को लगती है तो वह अपने आप को रोक नहीं पाते हैं और स्वयं के खर्चे पर उसका इलाज करवाते हैं। कुछ ही दिनों में वह स्वस्थ भी हो जाती है। परंतु अकस्मात् एक दिन इलाके का मशहूर चोर बटोरना उसका अपहरण कर लेता है और उसे अपनी रखैल बनाकर अपने पास रखता है। समय बीतने के साथ बटोरना हत्या, लूट, अपहरण आदि आपराधिक कुकृत्यों में लटगेनिया को भी सहभागी बनाकर ले जाने लगता है। इधर मास्टर साहब के सुधारवादी कार्यों से परेशान होकर इलाके के ओझाओं द्वारा मास्टर साहब के हत्या की साजिश रची जाती है, जिसकी सुपारी दी जाती है बटोरना को। बटोरना उसी रात अपने गुर्गों और लटगेनिया के साथ स्कूल से मास्टर साहब को उठाता है और उनकी हत्या के लिए उन्हें उसी रघुवा ब्रह्मस्थान पर ले जाता है, जहाँ ओझा–सोखा लोग अंधविश्वास, जादू–टोना, भूत–प्रेत के नाम पर महिलाओं का दैहिक शोषण करते हैं। परंतु उसी समय लछुमन मास्टर को देखकर लटगेनिया के हृदय में मास्टर के द्वारा पूर्व में की गई नेकी सिनेमा के रील की तरह चलने लगती है– **"कइसे ओकर सरल–मुअल देहि के लछुमन मास्टर दवा–बीरु करा के फोरू हरियर कंचन क देले रहन। आज ई बटोरना हमरा प लट्टू बा, हमार देहिये देख के नूं। हमरा के नया जिन्दगी**

देबेवाला मास्टर साहेब के जिन्दगी हमरा आँख के सामने हमरा जिअते चलि जाउ..... अइसन त हरगिज ना होखे के चाही।''[25]

लटगेनिया अचानक साक्षात् काली और चण्डी का रूप धारण कर लेती है तथा नशे में चूर बटोरना का सिर धड़ से अलग कर देती है। उसके इस विकराल, डरावने, भयंकर रूप को देखकर बटोरना के सारे गुर्गे सिर पर पैर रखकर भाग जाते हैं। लटगेनिया मास्टर साहब के पास आकर उनका हाथ खोलते हुए कहती है– **''साँच आदमी ऊहे हऽ, जे आदमियत खातिर जान दे देला। हम त जान ले लेनी। अब तनिको एइजा देरी मत करीं। सुनलहीं होखबि..... खा के परीं..... आ मार के टरीं.....। चलीं..... लुत्ती हो जाईं जा। हम रउआ ऋण से तनिका उऋण भइनीं। चलीं अब हम रावा के स्कूल प पहुँचा दीं। ओइजा से अपना माई–बाबू के आशीर्वाद लेत होत पराते थाना में जा के हाजिर हो जाइब। दरोगा जी से सभ बात पसन से हिरगा–हिरगा के बता देबि। हम जब ले जिअब, तले राउर सेवा करबि। हमरा जिअत जिनिगी रउआ पीठी केहू धूर ना लगाई। राउर एगो केश ना टेढ़ करी। तनिको मत डेराइबि। भागम मत। स्कूले प जुमल रहब।''[26]**

मास्टर साहब उस रात सो नहीं पाते हैं, लेकिन विद्यालय की बागवानी से आ रही फूलों की सुगंध उन्हें यह एहसास कर रही थी कि अब समय बदलेगा, अज्ञानता की धुंध छटेगी, जैसे काली बदरी के छटते ही चंद्रमा अपनी शीतल और श्वेत प्रकाश से संपूर्ण संसार को प्रकाशित कर देता है, वैसे ही इन सामाजिक कुरीतियों से मुक्त होकर हमारा समाज ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित होगा। लोगों के बीच फैले भेदभाव की खाई पटेगी, लोग प्रगतिशील होंगे तथा स्वस्थ एवं स्वर्णिम प्रगति से युक्त राष्ट्र और समाज के निर्माण में अपना अमूल्य योगदान प्रदान करेंगे।

'बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ' तथा नारी सशक्तिकरण को मजबूत करता यह उपन्यास अपने कथ्य और शिल्प की दृष्टि से भोजपुरी उपन्यास साहित्य की एक अमूल्य निधि है। अपनी शिल्पगत विशेषता, कथ्य एवं तथ्य के बल पर आरम्भ से अंत तक पाठकों को बाँधे रखता है। उपन्यास की भाषा–शैली सरस, सरस तथा अत्यंत प्रभावशाली है। भोजपुरी भाषा के खाँटी गँवई टकसाली कहावतों एवं मुहावरों का सटीक प्रयोग प्रशंसनीय है। जैसे–**पानी के फुहेरा दे के सैकड़न बेर कांड़ला के बदो बालू के देवाल कबो ना सुतरे.. ..... घीव लगाई चाहे संडा के तेल लगा के कुकुर के पोंछि मांड़ीं आ सोटीं, कवनों फरक ना होखे.....। नाच के जोकर, वकील आ मास्टर से कम बतियावल जाला, ई लोग के गाड़ी बातें पर चलेला।**

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कथाकार ने इस उपन्यास के माध्यम से स्त्री सशक्तिकरण, बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ अभियान को सशक्त करने के साथ–साथ समाज में शिक्षक के बहुमुखी योगदान एवं स्त्री शोषण तथा जीवन संघर्ष को रेखांकित करने का सफल प्रयास किया है। लेखक भोजपुरी समाज के लोगों को रिक्त पात्र नहीं समझता है,

जिसे खोखले विचारों से भरना है बल्कि वह दिमाग में उपस्थित अग्नि को प्रज्वलित करना चाहता है ताकि उस अग्नि में समाज की तमाम बुराइयाँ भस्म हो जाएं।

संदर्भ :–

1– कृष्ण कुमार, के हवन लछुमन मास्टर, अरुणोदय प्रकाशन बक्सर–बिहार, प्रकाशन वर्ष 2018, पृष्ठ संख्या– 14

2– वहीं पृष्ठ संख्या– 14

3– वहीं पृष्ठ संख्या– 15

4– वहीं पृष्ठ संख्या– 15

5– वहीं पृष्ठ संख्या– 32

6– वही पृष्ठ संख्या– 32,33

7– वहीं पृष्ठ संख्या– 34

8– वहीं पृष्ठ संख्या– 06

9– वही पृष्ठ संख्या– 35

10– वही पृष्ठ संख्या– 36

11– वहीं पृष्ठ संख्या– 36

12– वहीं पृष्ठ संख्या– 42

13– वही पृष्ठ संख्या– 47,48

14– वही पृष्ठ संख्या– 48

15– वहीं पृष्ठ संख्या– 49

16– वहीं पृष्ठ संख्या– 51

17– वहीं पृष्ठ संख्या– 51,52

18– वही पृष्ठ संख्या– 94,95

19– वही पृष्ठ संख्या– 129

20– वही पृष्ठ संख्या– 133

21– वही पृष्ठ संख्या– 135

22– वही पृष्ठ संख्या– 140

23– वही पृष्ठ संख्या 142,143

24– वही पृष्ठ संख्या– 145

25– वही पृष्ठ संख्या– 174

26– वहीं पृष्ठ संख्या– 175